26

उच्चतम न्यायालय
(Supreme Court)

अमेरिकी संविधान के विपरीत, भारतीय संविधान ने एकीकृत न्याय व्यवस्था की स्थापना की है, जिसमें शीर्ष स्थान पर उच्चतम न्यायालय व उसके अधीन उच्च न्यायालय हैं। एक उच्च न्यायालय के अधीन (और राज्य स्तर के नीचे) अधीनस्थ न्यायालयों की श्रेणियां हैं, जो हैं-जिला न्यायालय एवं अन्य अधीनस्थ न्यायालय। न्यायालय की यह एकल व्यवस्था भारत सरकार अधिनियम, 1935 से ग्रहण की गई है और यह केंद्रीय एवं राज्य विधियों को लागू करती है। दूसरी ओर, अमेरिका में न्यायालय की द्वैध व्यवस्था है, एक केंद्र के लिये तथा दूसरा राज्यों के लिये। संघीय कानून को संघ न्यायक्षेत्र एवं राज्य कानून को राज्य न्यायक्षेत्र द्वारा लागू किया जाता है। यद्यपि भारत भी अमरीका की तरह संघीय देश है लेकिन भारत में एकीकृत न्यायापालिका और मूल विधि व न्याय की एक प्रणाली है।

भारत के उच्चतम न्यायालय का उद्घाटन 28 जनवरी, 1950 को किया गया। यह भारत सरकार अधिनियम, 1935 के तहत लागू संघीय न्यायालय का उत्तराधिकारी था। हालांकि उच्चतम न्यायालय का न्यायक्षेत्र, पूर्ववर्ती न्यायालय से ज्यादा व्यापक है। उच्चतम न्यायालय ने ब्रिटेन के प्रिवी काउंसिल[1] का स्थान ग्रहण किया था, जो अब तक अपील का सर्वोच्च न्यायालय था।

भारतीय संविधान के भाग V में अनुच्छेद 124 से 147 तक, उच्चतम न्यायालय के गठन, स्वतंत्रता, न्यायक्षेत्र, शक्तियां, प्रक्रिया आदि का उल्लेख है। संसद भी उनके विनियमन के लिए अधिकृत है।

उच्चतम न्यायालय का गठन

इस समय उच्चतम न्यायालय में 31 न्यायाधीश (एक मुख्य न्यायाधीश एवं 30 अन्य न्यायाधीश) हैं। फरवरी, 2009 में केंद्र सरकार ने उच्चतम न्यायालय के कुल न्यायाधीशों की संख्या 26 से बढ़ाकर 31 कर दी है, जिसमें मुख्य न्यायाधीश भी शामिल हैं। यह वृद्धि उच्चतम न्यायालय (न्यायाधीशों की संख्या) संशोधन अधिनियम, 2008 के अंतर्गत की गयी है। मूलत: उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की संख्या 8 (एक मुख्य न्यायाधीश और 7 अन्य न्यायाधीश) निश्चित थी। 1956 में संसद ने अन्य न्यायाधीशों की संख्या 10 निश्चित की। 1960 में 13, फिर 1977 में 17 और फिर 1986 में 25।

न्यायाधीश

न्यायाधीशों की नियुक्ति : उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है। मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति अन्य न्यायाधीशों एवं उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की सलाह के बाद करता है। इसी तरह अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति भी होती है। मुख्य न्यायाधीश के अतिरिक्त अन्य न्यायाधिशों की नियुक्ति में मुख्य न्यायाधीश का परामर्श आवश्यक है।

परामर्श पर विवाद : उपरोक्त उपबंध में 'परामर्श' शब्द की उच्चतम न्यायालय द्वारा विभिन्न व्याख्याएं दी गई हैं। प्रथम

न्यायाधीश मामले (1982) में न्यायालय ने कहा कि परामर्श का मतलब सहमति नहीं, वरन विचारों का आदान-प्रदान है। लेकिन द्वितीय न्यायाधीश मामले (1993) में न्यायालय ने अपने पूर्व के फैसले को परिवर्तित किया और कहा कि परामर्श का मतलब सहमति प्रकट करना है। इस तरह यह व्यवस्था दी गई कि न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश द्वारा दी गई सलाह, राष्ट्रपति को मानना बाध्यता होगी लेकिन मुख्य न्यायाधीश यह सलाह अपने दो वरिष्ठतम सहयोगियों से विचार-विमर्श करने के बाद देगा। इसी तरह *तीसरे न्यायाधीश मामले* (1998)[2] में न्यायालय ने मत दिया कि परामर्श प्रक्रिया को मुख्य न्यायाधीश द्वारा 'बहुसंख्यक न्यायाधीशों की विचार' प्रक्रिया के तहत माना जाएगा। केवल भारत के मुख्य न्यायाधीश का एकल मत ही परामर्श प्रक्रिया को पूर्ण नहीं करता। उसे चार वरिष्ठतम न्यायाधीशों से सलाह करनी चाहिए, इनमें से अगर दो का मत भी पक्ष में नहीं है तो वह नियुक्ति के लिए सिफारिश नहीं भेज सकता। न्यायालय ने व्यवस्था दी कि बिना अन्य न्यायाधीशों की सलाह के भेजी गई सिफारिश को मानने के लिए सरकार बाध्य नहीं है।

99वां संविधान संशोधन अधिनियम 2014 तथा न्यायिक नियुक्ति आयोग अधिनियम 2014 ने सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए बने कौलेजियम प्रणाली (Collegium System) को एक नये निकाय राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग (National Judicial Appointments Commission, NJAC) से प्रतिस्थापित कर दिया है। हालांकि वर्ष 2015 में सर्वोच्च न्यायालय ने 99वें संविधान संशोधन अधिनियम तथा एनजेएसी अधिनियम दोनों को असंवैधानिक घोषित कर दिया है। परिणामत: पुरानी कॉलेजियम प्रणाली पुन: कार्यरत हो गई है। सर्वोच्च न्यायालय पर निर्णय 'फोर्थ जजेज कैसे' 2015[2a] (Fourth Judges Case, 2015) में आया। न्यायालय ने विचार केन्द्र आर्थिक नयी प्रणाली (NJAC) न्यायपालिका की स्वतंत्रता को प्रभावित करेगी।

मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति: 1950 से 1973 तक व्यवहार में यह था कि उच्चतम न्यायालय में वरिष्ठतम न्यायाधीश को बतौर मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया जाता था। इस व्यवस्था का 1973 में तब हनन हुआ, जब ए.एन. राय को तीन वरिष्ठतम न्यायाधीशों से ऊपर भारत का मुख्य न्यायाधीश नियुक्त कर दिया गया[3]। दोबारा 1977 में एम.यू. बेग को वरिष्ठतम व्यक्ति के ऊपर बतौर मुख्य न्यायाधीश बना दिया गया[4]। सरकार के इस निर्णय की स्वतंत्रता को उच्चतम न्यायालय ने *दूसरे न्यायाधीश मामले* (1993) में कम किया। इसमें उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठतम न्यायाधीश को ही भारत का मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया जाना चाहिए।

न्यायाधीशों की अर्हताएं : उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश बनने के लिए किसी व्यक्ति में निम्नलिखित अर्हताएं होनी चाहिए।

1. उसे भारत का नागरिक होना चाहिए।
2. (अ) उसे किसी उच्च न्यायालय का कम से कम पांच साल के लिए न्यायाधीश होना चाहिए, या (ब) उसे उच्च न्यायालय या विभिन्न न्यायालयों में मिलाकर 10 वर्ष तक वकील होना चाहिए, या (स) राष्ट्रपति के मत में उसे सम्मानित न्यायवादी होना चाहिए।

उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि संविधान में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए न्यूनतम आयु का उल्लेख नहीं है।

शपथ या प्रतिज्ञान : उच्चतम न्यायालय के लिए नियुक्त न्यायाधीश को अपना कार्यकाल संभालने से पूर्व राष्ट्रपति या इस कार्य के लिए उसके द्वारा नियुक्त व्यक्ति के सामने निम्नलिखित शपथ लेनी होगी कि मैं—

1. भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा।
2. भारत की प्रभुता एवं अखंडता को अक्षुण रखूंगा।
3. अपनी पूरी योग्यता ज्ञान और विवेक से अपने पद के कर्तव्यों का भय या पक्षपात, अनुराग या द्वेष के पालन करूंगा।
4. संविधान और विधियों की मर्यादा बनाए रखूंगा।

न्यायाधीशों का कार्यकाल : संविधान में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों का कार्यकाल तय नहीं किया गया हालांकि इस संबंध में निम्नलिखित तीन उपबंध बनाए गए हैं—

1. वह 65 वर्ष की आयु तक पद पर बना रह सकता है। उसके मामले में किसी प्रश्न के उठने पर संसद द्वारा स्थापित संस्था इसका निर्धारण करेगी।
2. वह राष्ट्रपति को लिखित त्यागपत्र दे सकता है।
3. संसद की सिफारिश पर राष्ट्रपति द्वारा उसे पद से हटाया जा सकता है।

न्यायाधीशों को हटाना : राष्ट्रपति के आदेश द्वारा उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को उसके पद से हटाया जा सकता है। राष्ट्रपति ऐसा तभी कर सकता है, जब इस प्रकार हटाए जाने हेतु संसद द्वारा उसी सत्र में ऐसा संबोधन किया गया हो[5]। इस आदेश

को संसद के दोनों सदनों के विशेष बहुमत (यानि सदन की कुल सदस्यता का बहुमत तथा सदन के उपस्थित एवं मत देने वाले सदस्यों का दो-तिहाई) का समर्थन प्राप्त होना चाहिए। उसे हटाने का आधार उसका दुर्व्यवहार या सिद्ध कदाचार होना चाहिए।

न्यायाधीश जांच अधिनियम (1968) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को हटाने के संबंध में महाभियोग की प्रक्रिया का उपबंध करता है—

1. निष्कासन प्रस्ताव 100 सदस्यों (लोकसभा के मामले में) या 50 सदस्यों (राज्यसभा के मामले में) द्वारा हस्ताक्षर करने के बाद अध्यक्ष/सभापति को दिया जाना चाहिए।
2. अध्यक्ष/सभापति इस प्रस्ताव को शामिल भी कर सकते हैं या इसे अस्वीकार भी कर सकते हैं।
3. यदि इसे स्वीकार कर लिया जाए तो अध्यक्ष/सभापति को इसकी जांच के लिए तीन सदस्यीय समिति गठित करनी होगी।
4. समिति में शामिल होना चाहिए—(अ) मुख्य न्यायाधीश या उच्चतम न्यायालय का कोई न्यायाधीश, (ब) किसी उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश, और (स) प्रतिष्ठित न्यायवादी।
5. यदि समिति न्यायाधीश को दुर्व्यवहार का दोषी या असक्षम पाती है तो सदन इस प्रस्ताव पर विचार कर सकता है।
6. विशेष बहुमत से दोनों सदनों में प्रस्ताव पारित कर इसे राष्ट्रपति को भेजा जाता है।
7. अंत में राष्ट्रपति न्यायाधीश को हटाने का आदेश जारी कर देते हैं।

यह रोचक है कि उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश पर अब तक महाभियोग नहीं लगाया गया है। पहला एवं एकमात्र महाभियोग का मामला उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश वी. रामास्वामी (1991-1993) का है। यद्यपि जांच समिति ने उन्हें दुर्व्यवहार का दोषी पाया पर उन पर महाभियोग नहीं लगाया जा सका क्योंकि यह लोकसभा में पारित नहीं हो सका। कांग्रेस पार्टी मतदान से अलग हो गई।

वेतन एवं भत्ते : उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को वेतन, भत्ते, विशेषाधिकार, अवकाश एवं पेंशन का निर्धारण समय-समय पर संसद द्वारा किया जाता है। वित्तीय आपातकाल के दौरान इनको कम किया जा सकता है। 2009 में मुख्य न्यायाधीश का वेतन प्रतिमाह 33,000 रुपये से बढ़ाकर 1 लाख रूपये प्रतिमाह और अन्य न्यायाधीशों का वेतन 30,000 प्रतिमाह से बढ़ाकर 90 हजार रूपये प्रतिमाह कर दिया गया है।[6] इसके अलावा उन्हें अन्य भत्ते भी दिए जाते हैं। उन्हें निशुल्क आवास और अन्य सुविधाएं जैसे—चिकित्सा, कार, टेलीफोन आदि भी मिलती हैं।

सेवानिवृत्त मुख्य न्यायाधीश एवं अन्य न्यायाधीशों की पेंशन उनके अंतिम माह के वेतन का पचास प्रतिशत निर्धारित है।

कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश

राष्ट्रपति किसी न्यायाधीश को भारत के उच्चतम न्यायालय का कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश नियुक्त कर सकता है जब—

1. मुख्य न्यायाधीश का पद रिक्त हो,
2. अस्थायी रूप से मुख्य न्यायाधीश अनुपस्थित हो,
3. मुख्य न्यायाधीश अपने दायित्वों के निर्वहन में असमर्थ हो।

तदर्थ न्यायाधीश

जब कभी कोरम पूरा करने में स्थायी न्यायाधीशों की संख्या कम हो रही हो तो भारत का मुख्य न्यायाधीश किसी उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश को अस्थायी काल के लिए उच्चतम न्यायालय में तदर्थ न्यायाधीश नियुक्त कर सकता है। ऐसा वह संबंधित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के परामर्श एवं राष्ट्रपति की पूर्ण मंजूरी के बाद ही कर सकता है। इस पद पर नियुक्त व्यक्ति के पास उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की अर्हताएं होनी चाहिये। तदर्थ न्यायाधीश के पद पर नियुक्त होने वाले व्यक्ति को अन्य दायित्वों की तुलना में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के दायित्वों को ज्यादा वरीयता देनी होगी। इस दौरान उसी उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की न्यायनिर्णयत, शक्तियों और विशेषाधिकार प्रापत होंगे।

सेवानिवृत्त न्यायाधीश

किसी भी समय भारत का मुख्य न्यायाधीश उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश से अल्पकाल के लिए उच्चतम न्यायालय में कार्य करने का अनुरोध कर सकता है। ऐसा संबंधित व्यक्ति एवं राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के ही किया जा सकता है। ऐसा न्यायाधीश राष्ट्रपति द्वारा निर्धारित भत्तों का उपभोग करने योग्य होता है। वह उच्च्तम न्यायालय के अन्य

न्यायाधीशों की तरह न्यायानिर्णयन, शक्तियों और विशेषाधिकारों का अधिकारी होगा, परंतु वह उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नहीं माना जाएगा।

उच्चतम न्यायालय का स्थान

संविधान ने उच्चतम न्यायालय का स्थान दिल्ली घोषित किया। लेकिन मुख्य न्यायाधीश को यह अधिकार है कि उच्चतम न्यायालय का स्थान कहीं और नियुक्त करे लेकिन ऐसा निर्णय वह राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के बाद ही ले सकता है। यह व्यवस्था वैकल्पिक है न कि अनिवार्य। इसका अर्थ यह है कि कोई भी न्यायालय न तो राष्ट्रपति और न ही मुख्य न्यायाधीश को यह निर्देश दे सकता है कि उच्चतम न्यायालय की पीठ कहीं और स्थापित की जाये।

न्यायालय की प्रक्रिया

उच्चतम न्यायालय राष्ट्रपति की मंजूरी के बाद न्यायालय की प्रक्रिया और संचालन हेतु नियम बना सकता है। संवैधानिक मामलों एवं संदर्भों को राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 143 के तहत बनाया जाता है और न्यायाधीशों की पीठ (पांच न्यायाधीशों) द्वारा निर्णित किया जाता है। अन्य मामलों का निर्णय सामान्यतया तीन न्यायाधीशों की पीठ करती है। फैसले खुले न्यायालय द्वारा जारी किए जाते हैं। सभी निर्णय बहुमत से लिये जाते हैं लेकिन मत भिन्नता हो तो न्यायाधीश इस असहमति का कारण बता सकता है।

उच्चतम न्यायालय की स्वतंत्रता

भारतीय लोकतांत्रिक एवं राजपद्धति में उच्चतम न्यायालय को बहुत महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान की गई है। यह संघीय न्यायालय, याचिका के लिए सर्वोच्च न्यायालय, नागरिकों के मूल अधिकारों का गारंटर और संविधान का अभिभावक है। इस तरह इसे प्रदत्त कार्य करने के लिए प्रभावी स्वतंत्रता और अधिकार काफी अहम हैं। यह अतिक्रमण, दबाव और हस्तक्षेप (कार्यकारिणी की मंत्रिपरिषद एवं संसद के विधानमंडल) से स्वतंत्र होना चाहिए। इसे बिना डर या पक्षपात के न्याय देने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।

संविधान ने उच्चतम न्यायालय की स्वतंत्रता और निष्पक्ष कार्यकरण सुनिश्चित करने के लिए निम्नलिखित उपबंध किए हैं—

1. **नियुक्ति का तरीका** उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति (यानी कैबिनेट) न्यायिक सदस्यों (अर्थात उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीश) की सलाह से करता है। यह व्यवस्था कार्यकारिणी के पक्षपात में कटौती करती है एवं सुनिश्चित करती है कि न्यायिक नियुक्ति राजनीति पर आधारित नहीं है।
2. **कार्यकाल की सुरक्षा** उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को कार्यकाल की सुरक्षा प्रदान की जाती है। उन्हें संविधान में उल्लिखित प्रावधानों के जरिए सिर्फ राष्ट्रपति हटा सकता है। इसका तात्पर्य है कि यद्यपि उनकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा होती है, लेकिन उनका कार्यकाल उसकी दया पर निर्भर नहीं है। यह इससे भी स्पष्ट होता है कि अब तक उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश को हटाया (या अभिभोग) नहीं गया है।
3. **निश्चित सेवा शर्तें** उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन, भत्ते, अवकाश, विशेषाधिकार, पेंशन का निर्धारण समय-समय पर संसद द्वारा किया जाता है। इन्हें उनके लिए प्रतिकूल ढंग से निर्मित नहीं किया जा सकता सिवाए वित्तीय आपातकाल के दौरान। इस तरह उनको प्राप्त सुविधाएं पूरे कार्यकाल तक रहती हैं।
4. **संचित निधि से व्यय** उच्चतम न्यायालय के न्यायधीशों का वेतन एवं कार्यालयीन व्यय, भत्ते एवं पेंशन एवं अन्य प्रशासनिक खर्च संचित निधि पर भारित होते हैं। अत: संसद द्वारा इन पर मतदान नहीं किया जा सकता (यद्यपि चर्चा की जा सकती है)
5. **न्यायाधीशों के आचरण पर बहस नहीं हो सकती** महाभियोग के अतिरिक्त संविधान में न्यायाधीशों के आचरण पर संसद में या राज्य विधानमंडल में बहस पर प्रतिबंध लगाया गया है।
6. **सेवानिवृत्ति के बाद वकालत पर रोक** सेवानिवृत्त न्यायाधीशों को भारत में कहीं भी किसी न्यायालय या प्राधिकरण में कार्य करने की स्वतंत्रता नहीं है। ऐसा यह सुनिश्चित करने के लिए किया गया है कि वह निर्णय देते समय भविष्य का ध्यान न रखें।
7. **अपनी अवमानना पर दंड देने की शक्ति** उच्चतम न्यायालय उस व्यक्ति को दंडित कर सकता है जो उसकी अवमानना करे। इसका तात्पर्य है कि इसके कार्यों एवं फैसलों की किसी इकाई द्वारा आलोचना नहीं की जा

सकती। यह शक्ति उच्चतम न्यायालय को प्राप्त है कि वह अपने प्राधिकार मर्यादा और प्रतिष्ठा को बनाए रखे।

8. **अपना स्टाफ नियुक्त करने की स्वतंत्रता** भारत के मुख्य न्यायाधीश को बिना कार्यकारी के हस्तक्षेप के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को नियुक्त करने का अधिकार है। वह उनकी सेवा शर्तों को भी तय कर सकता है।

9. **इसके न्यायक्षेत्र में कटौती नहीं की जा सकती** संसद को उच्चतम न्यायालय के न्याय क्षेत्र एवं शक्तियों में कटौती का अधिकार नहीं है। संविधान में इसके न्यायक्षेत्र एवं विभिन्न कार्यों का उल्लेख है हालांकि संसद इसमें वृद्धि कर सकती है।

10. **कार्यपालिका से पृथक** संविधान निर्देश देता है कि राज्य लोक-सेवाओं के क्रियान्वयन के मसले पर कार्यपालिका को न्यायपालिका से अलग करे। इसका मतलब कार्यकारिणी को न्यायिक शक्तियों को रखने का अधिकार नहीं है[7]। तदनुसार इसके कार्यान्वयन के उपरांत कार्यकारी प्राधिकारियों की न्यायिक प्रशासन में भूमिका समाप्त हो गई।

उच्चतम न्यायालय की शक्तियां एवं क्षेत्राधिकार

संविधान में उच्चतम न्यायालय की व्यापक शक्तियों एवं क्षेत्राधिकार को उल्लिखित किया गया है। अमेरिकी उच्चतम न्यायालय की तरह यह न केवल संघीय न्यायालय है, बल्कि ब्रिटिश हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स (ब्रिटिश संसद के उच्च सदन) की तरह अपील का अंतिम न्यायालय है, बल्कि यह संविधान और भारत के नागरिकों के अधिकारों का व्याख्याता एवं गारंटर भी है। इसके अलावा यह परामर्शदात्री एवं सर्वोच्च शक्ति है। इसीलिये संविधान की प्रारूप समिति के सदस्य अल्लादि कृष्ण अययर ने कहा था कि भारत के उच्चतम न्यायालय को विश्व के किसी अन्य सर्वोच्च न्यायालय की तुलना में ज्यादा शक्तियां प्राप्त हैं। उच्चतम न्यायालय की शक्ति एवं न्यायक्षेत्रों को निम्नलिखित तरह से वर्गीकृत किया जा सकता है—

1. मूल क्षेत्राधिकार
2. न्यायादेश क्षेत्राधिकार
3. अपीलीय क्षेत्राधिकार
4. सलाहकार क्षेत्राधिकार
5. अभिलेखों का न्यायालय
6. न्यायिक समीक्षा की शक्ति
7. अन्य शक्तियां

1. मूल क्षेत्राधिकार

उच्चतम न्यायालय भारत के संघीय ढांचे की विभिन्न इकाइयों के बीच किसी विवाद पर संघीय न्यायालय की तरह निर्णय देता है। किसी भी विवाद को जो—

(i) केंद्र व एक या अधिक राज्यों के बीच हों, या

(ii) केंद्र और कोई राज्य या राज्यों का एक तरफ होना एवं एक या अधिक राज्यों का दूसरी तरफ होना, या

(iii) दो या अधिक राज्यों के बीच।

उपरोक्त संघीय विवाद पर उच्चतम न्यायालय में 'विशेष मूल' न्यायक्षेत्र निहित है। विशेष का अभिप्राय है किसी अन्य न्यायालय को विवादों के निपटाने में इस तरह की शक्तियां प्राप्त नहीं हैं।

उच्चतम न्यायालय के विशेष आधारभूत न्यायाधिकरण के संबंध में दो बिंदुओं को ध्यान रखना चाहिए। पहला, विवाद ऐसा होना चाहिए जिस पर विधिक अधिकार निहित हो। इस तरह राजनीतिक प्रकृति का प्रश्न इसमें समाहित नहीं है। दूसरा, किसी नागरिक द्वारा केंद्र या राज्य के विरुद्ध लाए गए मामले को इसके अंतर्गत स्वीकार नहीं किया जाता है।

इस तरह उच्चतम न्यायालय के इस न्यायक्षेत्र में निम्नलिखित समाहित नहीं हैं—

(i) कोई विवाद जो किसी पूर्व संवैधानिक संधि, समझौता, प्रसंविदा, सनद एवं अन्य समान संस्थाओं को लेकर उत्पन्न हुआ हो[8]।

(ii) कोई विवाद जो संधि, समझौते आदि के बाहर पैदा हुआ हो जिसमें विशेष तौर पर यह व्यवस्था हो कि संबंधित न्यायक्षेत्र उस विवाद से संबंधित नहीं है[9]।

(iii) अंतर्राज्यीय जल विवाद[10]।

(iv) वित्त आयोग के संदर्भ वाले मामले।

(v) केंद्र एवं राज्यों के बीच कुछ खर्चों व पेंशन का समझौता।

(vi) केंद्र व राज्यों के बीच वाणिज्यिक प्रकृति वाला साधारण विवाद।

(vii) केंद्र के खिलाफ राज्य के किसी नुकसान की भरपाई।

1961 में मूल न्यायक्षेत्र के पहले मामले में पश्चिम बंगाल द्वारा केंद्र के खिलाफ मामला लाया गया। राज्य सरकार ने संसद द्वारा पारित कोयला खदान क्षेत्र (अधिग्रहण एवं विकास) अधिनियम 1957 की संवैधानिक वैधता को चुनौती दी। हालांकि उच्चतम न्यायालय ने अधिनियम की वैधानिकता को मानते हुए इस मुकदमे को खारिज कर दिया।

2. न्यायादेश क्षेत्राधिकार

संविधान ने उच्चतम न्यायालयों को नागरिकों के मूल अधिकारों के रक्षक एवं गारंटर के रूप में स्थापित किया है। उच्चतम न्यायालय को अधिकार प्राप्त है कि वह बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, उत्प्रेषण, प्रतिषेध एवं अधिकार प्रेच्छा आदि पर न्यायादेश जारी कर विक्षिप्त नागरिक के मूल अधिकारों की रक्षा करे। इस संबंध में उच्चतम न्यायालय को मूल न्यायाधिकार प्राप्त हैं और नागरिक को अधिकार है कि वह बिना अपील याचिका के सीधे उच्चतम न्यायालय में जा सकता है। हालांकि न्यायादेश न्यायक्षेत्र के मामले में यह उच्चतम न्यायालय का विशेषाधिकार नहीं है। इस तरह का अधिकार उच्च न्यायालयों को भी प्राप्त है। इसका मतलब है कि जब किसी नागरिक के मूल अधिकारों का हनन हो रहा हो तो वह सीधे उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय में जा सकता है।

इसलिए मूल अधिकारों के संबंध में विवादों की तुलना में मूल न्यायनिर्णयन क्षेत्र से संघीय विवादों के संबंध में उच्चतम न्यायालय का मूल न्यायनिर्णयन क्षेत्र भिन्न है। पहले मामले में यह उच्च न्यायालय के साथ समवर्ती तथा दूसरे में विशिष्ट है। इसके अतिरिक्त पहले मामले में विवाद किसी नागरिक और सरकार (केन्द्रीय या राज्य) के बीच होता है जबकि दूसरे मामले में इकाइंया संघीय (केन्द्रीय और राज्य) होती हैं।

न्यायादेश क्षेत्राधिकार के मामले में उच्चतम न्यायालय व उच्च न्यायालय में एक और अंतर है। उच्चतम न्यायालय केवल मूल अधिकारों के क्रियान्वयन के संबंध में न्यायादेश जारी कर सकता है, अन्य उद्देश्य से नहीं; जबकि दूसरी तरफ उच्च न्यायालय न केवल मूल अधिकारों के लिए न्यायादेश जारी कर सकता है बल्कि अन्य उद्देश्यों के लिए भी इसे जारी कर सकता है। इसका अभिप्राय है कि न्यायादेश न्यायक्षेत्र के मसले पर उच्च न्यायालय का क्षेत्र ज्यादा विस्तृत है। लेकिन संसद उच्चतम न्यायालय को अन्य उद्देश्यों के लिए न्यायादेश की शक्ति प्रदान कर सकती है।

3. अपीलीय क्षेत्राधिकार

जैसा कि पूर्व में बताया गया है उच्चतम न्यायालय न केवल भारत के संघीय न्यायालय के उत्तराधिकारी की तरह है बल्कि यह ब्रिटिश प्रीवी कौंसिल के स्थान पर स्थानांतरित है जो अपीलीय का उच्चतम न्यायालय है। उच्चतम न्यायालय निचली अदालतों के फैसलों के खिलाफ सुनवाई करता है। इसके अपीलीय न्यायक्षेत्र को निम्नलिखित चार शीर्षों में वर्गीकृत किया जा सकता है—

(i) संवैधानिक मामलों में अपील,
(ii) दीवानी मामलों में अपील,
(iii) आपराधिक मामलों में अपील,
(iv) विशेष अनुमति द्वारा अपील।

(i) संवैधानिक मामले : संवैधानिक मामलों में उच्चतम न्यायालय में उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ अपील की जा सकती है। यदि उच्च न्यायालय इसे प्रभावित करे कि मामले में विधि का पूरक प्रश्न निहित है जिसमें संविधान की व्याख्या निहित है। अनुचित फैसले के आधार पर उच्चतम न्यायालय में अपील की जा सकती है।

(ii) दीवानी मामले : दीवानी मामलों के तहत उच्चतम न्यायालय में किसी भी मामले को लाया जा सकता है यदि उच्च न्यायालय प्रमाणित कर दे—

(i) मामला सामान्य महत्व के पूरक प्रश्न पर आधारित है।
(ii) ऐसा प्रश्न है जिसका निर्णय उच्चतम न्यायालय द्वारा किया जाना आवश्यक है।

मूलत: 20,000 रुपये तक के दीवानी मामले ही उच्चतम न्यायालय के समक्ष लाए जा सकते थे लेकिन इस धन संबंधी सीमा को 30वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम 1972 द्वारा हटा दिया गया।

(iii) आपराधिक मामले : उच्चतम न्यायालय उच्च न्यायालय के आपराधिक मामलों के फैसलों के खिलाफ सुनवाई करता है यदि उच्च न्यायालय ने-

(क) आरोपी व्यक्ति के दोषमोचन के आदेश को पलट दिया हो और उसे सजा-ए-मौत दी हो।

(ख) किसी अधीनस्थ न्यायालय से मामला लेकर आरोपी व्यक्ति को दोषसिद्ध किया हो, उसे सजा-ए-मौत दी हो।

(ग) यह प्रमाणित करे कि संबंधित मामला उच्चतम न्यायालय में ले जाने योग्य है।

पहले दोनों मामलों में उच्चतम न्यायालय में अपील अधिकार स्वरूप आती है (अर्थात उच्च न्यायालय के किसी प्रमाणपत्र के बिना) परन्तु यदि उच्च न्यायालय ने बंदीकरण के आदेश को पलट कर आरोपी को दोषमुक्त करने का आदेश दिया हो तो उच्चतम न्यायालय में अपील का कोई अधिकार नहीं होगा।

1970 में संसद ने उच्चतम न्यायालय के आपराधिक अपीलीय न्यायक्षेत्र में विस्तार किया। उच्च न्यायालय के किसी फैसले पर अपील हो सकती है यदि उच्च न्यायालय ने—

(अ) किसी अपील में आरोपी व्यक्ति को दोषमुक्त किया हो और उसे उम्र कैद या दस वर्ष की सजा सुनाई गई हो।

(ब) स्वयं किसी मामले को किसी अधीनस्थ न्यायालय से लिया हो और आरोपी व्यक्ति को उम्र कैद या दस साल की सजा सुनाई गई हो।

इस तरह उच्चतम न्यायालय का अपीलीय न्यायक्षेत्र सभी दीवानी एवं आपराधिक मामलों में विस्तारित है। जहां भारत के संघीय न्यायालय को उच्च न्यायालय से अपीलों पर क्षेत्राधिकार था परन्तु जो उपरोक्त वर्णित उच्चतम न्यायालय के सिविल और अपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार के अंतर्गत न आता हो।

(iv) विशेष अनुमति द्वारा अपील : उच्चतम न्यायालय को इस बात का अधिकार है कि अपना मत विशेष अनुमति प्राप्त अपील को दे जो कि किसी भी फैसले से संबंधित मामले से जुड़ी हो। फैसला किसी न्यायालय या पंचाटों से संबंधित (सिवा सैन्य अदालतों के) हों। इस व्यवस्था में निम्नलिखित चार बिंदु हैं—

(i) यह एक विवेकानुसार शक्ति है और इसलिए इसका अधिकार के रूप में दावा नहीं किया जा सकता।

(ii) किसी भी फैसले में इसका मत या तो अंतिम होता है या अंतरिम

(iii) यह किसी भी मामले से संबंधित हो सकता है— संवैधानिक, दीवानी, आपराधिक, आयकर, श्रम, राजस्व, वकील आदि।

(iv) इसे किसी भी न्यायालय या पंचाट के खिलाफ किया जा सकता है, केवल उच्च न्यायालय के खिलाफ ही जरूरी नहीं है (सैन्य न्यायालय को छोड़कर)।

इस तरह इस उपबंध का कार्य क्षेत्र काफी व्यापक है और इसकी पूर्ण सुनवाई उच्चतम न्यायालय में निहित है। इस शक्ति के उपयोग पर उच्चतम न्यायालय स्वयं 'एक अनोखी और अधिग्रहण शक्ति होने के नाते इसका प्रयोग सावधानी के साथ विशेष परिस्थितियों में ही बिरले रूप में ही करता है। इसके आगे यह संभव नहीं है कि इस शक्ति का प्रयोग किसी भी नियम के तहत करे।'

4. सलाहकार क्षेत्राधिकार

संविधान (अनुच्छेद 143) राष्ट्रपति को दो श्रेणियों के मामलों में उच्चतम न्यायालय से राय लेने का अधिकार देता है—

(अ) सार्वजनिक महत्व के किसी मसले पर विधिक प्रश्न उठने पर।

(ब) किसी पूर्व संवैधानिक संधि, समझौते, प्रसंविदा आदि सनद मामलों पर किसी विवाद के उत्पन्न होने पर[11]।

पहले मामले में उच्चतम न्यायालय अपना मत दे भी सकता है और देने से इनकार भी कर सकता है। दूसरे मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा राष्ट्रपति को अपना मत देना अनिवार्य है। दोनों ही मामलों में उच्चतम न्यायालय का मत सिर्फ सलाह होती है। इस तरह, राष्ट्रपति इसके लिए बाध्य नहीं है कि वह इस सलाह को माने। यद्यपि सरकार अपने द्वारा निर्णय लिए जाने के संबंध में इसके द्वारा प्राधिकृत विधिक सलाह प्राप्त करती है।

अब तक (2013) राष्ट्रपति द्वारा अपने सलाहकारी क्षेत्राधिकार के अंतर्गत (जो कि परामर्शक क्षेत्राधिकार के रूप में जाना जाता है।) सर्वोच्च न्यायालय को 15 मामले संदर्भित किए गए हैं जो कि कालानुक्रम से निम्नवत हैं:

1. दिल्ली विधि अधिनियम (Delhi Laws Act), 1951 में।
2. केरल शिक्षा विधेयक, 1958 में
3. बेरुबारी संघ, 1960 में
4. समुद्री सीमा शुल्क अधिनियम, 1963 में
5. विधायिका के विशेषाधिकार से संबंधित केशव सिंह मामले, 1964 में।
6. राष्ट्रपति चुनाव, 1974 में
7. विशेष न्यायालय विधेयक, 1978 में
8. जम्मू एवं कश्मीर पुनर्स्थापन अधिनियम, 1982 में
9. कावेरी जल विवाद न्यायाधिकरण, 1992 में
10. रामजन्म भूमि मामला, 1993 में
11. भारत के मुख्य न्यायाधीश द्वारा अपनाई जाने वाली मंत्रणा प्रक्रिया, 1998 में
12. प्राकृतिक गैस एवं तरल प्राकृतिक गैस से संबंधित विषयों पर केन्द्र तथा राज्यों की विधायी सक्षमता, 2001 में
13. चुनाव आयोग के गुजरात विधानसभा चुनावों को स्थगित करने के निर्णय की संवैधानिक वैधता, 2002 में
14. पंजाब समझौते को समाप्त करने संबंधी अधिनियम (Punjab Termination of Agreements Act), 2004 में
15. 2जी स्पेक्ट्रम मामले में आया निर्णय तथा प्राकृतिक संसाधनों की सभी क्षेत्रो में नीलामी को बाध्यकारी बनाया जाना, 2012 में

5. अभिलेख का न्यायालय

अभिलेखों के न्यायालय के रूप में उच्चतम न्यायालय के पास दो शक्तियां हैं—

(i) उच्चतम न्यायालय की कार्यवाही एवं उसके फैसले सार्वकालिक अभिलेख व साक्ष्य के रूप में रखे जाएंगे। इन अभिलेखों पर किसी अन्य अदालत में चल रहे मामले के दौरान प्रश्न नहीं उठाया जा सकता। उन्हें विधिक संदर्भों की तरह स्वीकार किया जाएगा।

(ii) इसके पास न्यायालय की अवमानना पर दंडित करने का अधिकार है। इसमें 6 वर्ष के लिए सामान्य जेल या 2000 रुपए तक अर्थदंड या दोनों शामिल हैं। 1991 में उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि दंड देने की यह शक्ति न केवल उच्चतम न्यायालय में निहित है बल्कि ऐसा ही अधिकार उच्च न्यायालयों, अधीनस्थ न्यायालयों, पंचाटों को भी प्राप्त हैं।

न्यायालय की अवमानना सिविल या आपराधिक दोनों प्रकार की हो सकती है। सिविल अवमानना का मतलब है स्वेच्छा से किसी फैसले, आदेश, न्यायादेश की अवहेलना जबकि आपराधिक अपमानना का मतलब किसी ऐसी सामग्री का प्रकाशन और ऐसा कार्य करना—**(i)** जिसमें न्यायालय की स्थिति को कमतर आंकना या उसको बदनाम करना, या **(ii)** न्यायिक प्रक्रिया में बाधा पहुंचाना, **(iii)** न्याय प्रशासन को किसी भी तरीके से रोकना।

हालांकि, किसी मामले का निर्दोष प्रकाशन और उसका वितरण न्यायिक कार्यवाही रिपोर्ट की निष्पक्ष, उचित आलोचना और प्रशासनिक दिशा से इस पर टिप्पणी को न्यायालय की अवमानना में नहीं माना जाता।

6. न्यायिक समीक्षा की शक्ति

उच्चतम न्यायालय में न्यायिक समीक्षा की शक्ति निहित है। इसके तहत वह केंद्र व राज्य दोनों स्तरों पर विधायी व कार्यकारी आदेशों की सांविधानिकता की जांच की जाती है। इन्हें अधिकारातीत पाए जाने पर इन्हें अ-विधिक, असंवैधानिक और अवैध (बालित और शून्य घोषित किया जा सकता है) तदुपरांत इन्हें सरकार द्वारा लागू नहीं किया जा सकता।

7. अन्य शक्तियां

उपरोक्त शक्तियों के अतिरिक्त उच्चतम न्यायालय को कई अन्य शक्तियां भी प्राप्त हैं, जैसे—

(i) यह राष्ट्रपति एवं उपराष्ट्रपति के निर्वाचन के संबंध में किसी प्रकार के विवाद का निपटारा करता है। इस संबंध में यह मूल, विशेष एवं अंतिम व्यवस्थापक है।

(ii) यह संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्यों के व्यवहार एवं आचरण की जांच करता है, उस संदर्भ में जिसे राष्ट्रपति द्वारा निर्मित किया गया है। यदि यह उन्हें दुव्यर्वहार का दोषी पाता है तो राष्ट्रपति से उसको हटाने की सिफारिश कर सकता है। उच्चतम न्यायालय द्वारा दी गई इस सलाह को मानने के लिए राष्ट्रपति बाध्य है।

तालिका 26.1 *भारतीय एवं अमेरिकी उच्चतम न्यायालय की तुलना*

भारतीय उच्चतम न्यायालय	अमेरिकी उच्चतम न्यायालय
1. इसका वास्तविक न्यायक्षेत्र संघीय मामलों तक सीमित है।	1. इसके वास्तविक न्यायक्षेत्र में न केवल संघीय मामले हैं बल्कि नौसेना, समुद्री व राजदूतों के मामले भी शामिल हैं।
2. इसके अपीलीय न्यायक्षेत्र में संवैधानिक, जन अधिकार एवं आपराधिक मामले सभी शामिल हैं।	2. इसके अपीलीय न्यायक्षेत्र में केवल संवैधानिक मामले शामिल हैं।
3. इसका क्षेत्र व्यापक है क्योंकि इसमें किसी मामले से संबंधित किसी न्यायालय के फैसले (सैन्य न्यायालय को छोड़कर) के खिलाफ अपील की जा सकती है।	3. इसके पास इस तरह की शक्तियां नहीं हैं।
4. यह सलाहकार न्यायक्षेत्र है।	4. इसके पास कोई सलाहकार न्यायक्षेत्र नहीं है।
5. इसके न्यायिक समीक्षा के अवसर सीमित हैं।	5. इसके न्यायिक समीक्षा के क्षेत्र व्यापक हैं।
6. यह 'विधि द्वारा कार्यवाही' के तहत अधिकारों की रक्षा करता है।	6. यह 'विधिवत प्रक्रिया' के तहत नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करता है।
7. इसकी न्यायक्षेत्र व शक्तियों को संसद द्वारा बढ़ाया जा सकता है।	7. इसके न्यायक्षेत्र व शक्तियां संविधान द्वारा उल्लिखित सीमित हैं।
8. एकीकृत न्यायिक व्यवस्था के तहत इसके पास न्यायिक अधीक्षक का अधिकार है और सभी उच्च न्यायालयों पर नियंत्रण रहता है।	8. दोहरी (या विभक्त) न्याय व्यवस्था के कारण इसके पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है।

(iii) अपने स्वयं के फैसले की समीक्षा करने की शक्ति इसे है, इस तरह यह अपने पूर्व के फैसले पर अडिग रहने को बाध्य नहीं है और सामुदायिक हितों व न्याय के हित में वह इससे हटकर भी फैसले ले सकता है। संक्षेप में उच्चतम न्यायालय स्वयं सुधार संस्था है। उदाहरण के लिए केशवानंद भारती मामले (1973) में उच्चतम न्यायालय ने अपने पूर्व के फैसले गोलकनाथ मामले (1967) से हटकर फैसला दिया।

(iv) उच्च न्यायालयों में लंबित पड़े मामलों को यह मंगवा सकता है और उनका निपटारा कर सकता है। यह किसी लंबित मामले या अपील को एक उच्च न्यायालय से दूसरे में स्थानांतरित भी कर सकता है।

(v) इसकी विधियां भारत के सभी न्यायालयों के लिए बाध्य होंगी। इसके डिक्री या आदेश पूरे देश में लागू होते हैं। सभी प्राधिकारी (सिविल और न्यायिक) उच्चतम, न्यायालय की सहायता में कार्य करते हैं।

(vi) यह संविधान का इकलौता व्याख्याता है। यह संविधान की विभिन्न उपबंधों एवं उसमें निहित तत्वों को अंतिम रूप प्रदान करता है।

(vii) इसे न्यायिक अधीक्षण की शक्ति प्राप्त हैं और इसका देश के सभी न्यायालयों एवं पंचाटों के क्रियाकलापों पर नियंत्रण है।

उच्चतम न्यायालय के न्यायक्षेत्र एवं शक्तियों को केंद्रीय सूची से संबंधित मामलों पर संसद द्वारा विस्तारित किया जा सकता है और इसके न्यायक्षेत्र एवं शक्ति अन्य मामलों में केंद्र एवं राज्यों के बीच विशेष समझौते के तहत विस्तारित किए जा सकते हैं।

उच्चतम न्यायालय के अधिवक्ता

उच्चतम न्यायालय में कार्य करने वाले अधिवक्ताओं की निम्न तीन श्रेणियां निर्धारित की गयी हैं–

1. वरिष्ठ अधिवक्ता ये वे अधिवक्ता होते हैं, जिन्हें उच्चतम न्यायालय वरिष्ठ अधिवक्ता की मान्यता देता है। न्यायालय ऐसे किसी भी अधिवक्ता को, जो उसकी नजर में ख्यात विधिवेत्ता हो, कानूनी मामलों में पारंगत हो, संविधान का विशेष ज्ञान रखता हो तथा बार की सदस्यता प्राप्त हो, उसकी सहमति से वरिष्ठ अधिवक्ता नियुक्त कर सकता है। वरिष्ठ अधिवक्ता, बिना अधिवक्ता आन रिकार्ड के बिना बहस में उपस्थित नहीं हो सकता है। ऐसा अधिवक्ता किसी अधीनस्थ न्यायालय या

तालिका 26.2 *उच्चतम न्यायालय से संबंधित अनुच्छेद: एक नजर में*

अनुच्छेद	विषय-वस्तु
124	उच्चतम न्यायालय की स्थापना तथा गठन
124A	राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग (NJAC)
124B	आयोग के कार्य
124C	संसद की कानून बनाने की शक्ति
125	न्यायाधीशों का वेतन इत्यादि
126	कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति
127	तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति
128	उच्चतम न्यायालय की बैठकों में सेवानिवृत न्यायाधीशों की उपस्थिति
129	अभिलेख न्यायालय के रूप में उच्चतम न्यायालय
130	उच्चतम न्यायालय का आसन
131	उच्चतम न्यायालय का मूल क्षेत्राधिकार
131ए	केन्द्रीय कानूनों की संवैधानिक वैधता से संबंधित प्रश्नों के बारे में उच्चतम न्यायालय का विशेष क्षेत्राधिकार (निरस्त)
132	उच्चतम न्यायालय का कुछ मामलों में उच्च न्यायालयों से अपील के मामले में अपीलीय क्षेत्राधिकार
133	सिविल मामलों में उच्च न्यायालय में अपील से संबंधित उच्चतम न्यायालय का अपीलीय क्षेत्राधिकार
134	उच्चतम न्यायालय का आपराधिक मामलों में अपीलीय क्षेत्राधिकार
134ए	उच्चतम न्यायलय में अपील के लिए प्रमाण-पत्र
135	उच्चतम न्यायालय द्वारा वर्तमान कानूनों के अंतर्गत संघीय न्यायालय के क्षेत्राधिकार तथा शक्तियों का उपयोग
136	उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील के लिए विशेष अवकाश
137	उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णयों अथवा आदेशों की समीक्षा
138	उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार को विस्तारित करना
139	कतिपय विषयों पर रिट जारी करने की उच्चतम न्यायालय की शक्ति
139ए	कुछ मामलों का स्थानांतरण
140	उच्चतम न्यायालय की आनुषंगिक शक्तियाँ
141	उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित कानून का सभी न्यायालयों पर लागू होना
142	उच्चतम न्यायालय के आदेशों तथा साथ ही अन्वेषण आदि से संबंधित आदेशों का प्रवर्तन कराना
143	राष्ट्रपति की उच्चतम न्यायालय से सलाह करने की शक्ति
144	सिविल तथा न्यायिक अधिकारियों का उच्चतम न्यायालय का सहायक होना
144ए	कानूनों की संवैधानिक वैधता से जुड़े प्रश्नों के विस्तारण के लिए विशेष प्रावधान (निरस्त)
145	न्यायालय के नियम इत्यादि
146	उच्चतम न्यायालय के पदाधिकारी तथा सेवक एवं व्यय इत्यादि
147	व्याख्या

न्यायाधिकरण में बिना किसी कनिष्ठ के पेश नहीं हो सकता है। वह प्रार्थना या शपथपत्र के संबंध में अनुदेश प्राप्त करने के लिए अधिकृत नहीं है, भारत में किसी न्यायालय या अधिकरण में कोई सामान प्रारूप कार्य या सलाह या साक्ष्य लेने या किसी प्रकार का प्रसार कार्य करने के लिए अधिकृत नहीं है। परन्तु यह निषेध किसी कनिष्ठ के साथ परामर्श में ऐसे किसी मामले के निपटान से संबंधित नहीं है।

2. **एडवोकेट ऑन रिकार्ड** केवल इस प्रकार के अधिवक्ता ही उच्चतम न्यायालय के समक्ष किसी प्रकार का रिकार्ड पेश कर सकते हैं एवं अपील फाइल कर सकते हैं। ये किसी पार्टी की ओर से उच्चतम न्यायालय के समक्ष पेश भी हो सकते हैं।
3. **अन्य अधिवक्ता** ये वे अधिवक्ता होते हैं, जिनका नाम अधिवक्ता अधिनियम, 1961 के अंतर्गत किसी राज्य बार काउंसिल में दर्ज होता है। ये किसी पार्टी की ओर से उच्चतम न्यायालय के समक्ष पेश हो सकते हैं तथा बहस कर सकते हैं। लेकिन इन्हें उच्चतम न्यायालय में कोई दस्तावेज या मामला दायर करने का अधिकार नहीं होता है।

संदर्भ सूची

1. 1950 से पूर्व ब्रिटिश प्रिवी कौंसिल के पास यह न्यायिक अधिकार भी था कि वह भारत से अपील की सुनवाई करती थी।
2. पुनः राष्ट्रपति संदर्भ (1998) में राष्ट्रपति ने उच्चतम न्यायालय से (अनुच्छेद 143 के तहत) 1993 में भारत के मुख्य न्यायाधीश द्वारा अपनाई गई आवश्यक शर्तों के संबंध में संवैधानिक व्यवस्था के तहत कुछ संदेह पर परामर्श मांगा।

2a. सुप्रीम कोर्ट एडवोकेट्स-ऑन-रिकार्ड एसोसिएशन एंड एनदर बनाम यूनियन ऑफ इंडिया (2015)

3. वरिष्ठताक्रम में ए.एन. राय चौथे थे। अन्य तीन न्यायाधीश थे जे.एम. शेलट, के.एस. हेगड़े और ए.एन. ग्रोवर। सभी तीन न्यायाधीशों ने उच्चतम न्यायालय से त्यागपत्र दे दिया। केशवानंद भारती मामले (1973) के फैसले के विरोध में सरकार ने उनकी वरिष्ठता की अवहेलना की।
4. वे एच.आर. खन्ना थे और उन्होंने भी त्यागपत्र दे दिया। उनके विवादास्पद फैसले एडीएम जबलपुर बनाम शिवकांत शुक्ला मामले (1976) से आपातकाल के दौरान भी अधिकारों के प्रयोग की अनुमति मिल गई जिसे सरकार ने अपनी सहमति नहीं दी।
5. न्यायाधीशों को हटाने संबंधी एक प्रस्ताव लोकसभा विघटित होने पर समाप्त नहीं होगा।
6. 1950 में उनका वेतन क्रमशः 5000 रुपये एवं 4000 रुपये प्रतिमाह था। 1986 में उनका वेतन बढ़ाकर 10,000 एवं 9000 प्रतिमाह कर दिया गया। 1998 में उनका वेतन बढ़ाकर 33,000 एवं 30,000 प्रतिमाह कर दिया गया।
7. आपराधिक कार्यवाही संहिता (1973) से कार्यपालिका से न्यायपालिका को विभक्त करना; प्रभावी हुआ (अनुच्छेद 50 राज्य नीति के निदेशक तत्वों के अंतर्गत)।
8. पूर्व संविधान का मतलब संविधान के आस्तित्व में आने से पूर्व इसमें शामिल कार्यवाहियां हैं। ये संविधान लागू होने के बाद भी उसमें रहीं।
9. इसका मतलब अंतर-सरकारीय समझौते (जैसे राज्यों के बीच समझौता या केन्द्र-राज्य के बीच समझौता) को उच्चतम न्यायालय के मूल न्यायक्षेत्र से बाहर किया जा सकता है। दोनों के बीच विवाद की स्थिति में यदि कोई मसला हो।
10. अंतरराज्यीय जल विवाद अधिनियम 1956 ने उच्चतम न्यायालय के न्यायक्षेत्र को अंतरराज्यीय पानी, नदी एवं नदी घाटी पर नियंत्रण व बंटवारे के मसले पर मूल न्यायक्षेत्र से बाहर किया।
11. इनमें शामिल हैं-1947 से 1950 के दौरान केन्द्र सरकार और शाही शासन के बीच संधि, प्रतिज्ञापत्र आदि।